"नशा कहानी" (1934)

मुंशी प्रेमचन्द जी ने 'नशा' कहानी को 26 फरवरी सन् 1934 में चांद मासिक पत्रिका के द्वारा प्रकाशित किया था।[1] आप इस कहानी में एक जमींदार के पुत्र ईश्वरी और गरीब क्लर्क (बाबू) का पुत्र कहानी – नायक 'गैं' – (जिसका नाम समस्त कथा में एक बार 'वीर' रूप में प्राप्त होता है। परस्पर प्रगाढ मित्र है। वे कालेज के विद्यार्थी हैं और छात्रावास में साथ साथ रहते है।[2] प्रेमचन्द ने इस कहानी में नशा नामकरण देकर इस बात का संकेत समाज में पहुचाया कि नशा आदमी को कई प्रकार से हो सकता है। सबसे पहला शराब का नशा, दूसरे धन- दौलत का नशा, तीसरे ताकत या जवानी का नशा, चौथे कुर्सी का नशा, पांचवे औलाद या सन्तानों का नशा, छठे ज्ञान का नशा इत्यादि। इस प्रकार से प्रेमचन्द जी को शराब का नशा ही पसन्द आना प्रतीत हो रहा है। क्योंकि आपने सन् 1924 की बात है आप बेदार साहब के यहा प्रयाग (इलाहाबाद) गये हुए थे। 'माधुरी' आफिस की कुछ किताबें बोर्ड में मन्जूर कराने के लिए गये थे। बेदार साहब शराबी थे। खुद पिया, आपको भी (प्रेमचन्द जी) पिलाया। वहां से लौटे तो नशे मे चूर। उसी दिन मेरे कान (शिवरानी देवी) का फोडा फूटा। मैं भी अपने कान में रूई लगाकर सो गई थी।[3] इस प्रकार से ज्ञात होता है कि मनुष्य अपने जीवन में अनेक कोमल कल्पनायें लेकर प्रवेश करता है। इन्हीं कल्पनाओं के आधार पर भविष्य के सुख मय चित्र मनुष्य के समक्ष सदा ही मंडराया करते हैं। लेकिन ये सुख स्वप्न जब पूर्ण नही होते हैं तो मनुष्य को दुख तो होता ही है। साथ ही वे उसके लिए एक कहानी मात्र बनकर रह जाते है।[4]

---

1. कमलकिशोर गोयनका– प्रेमचन्द विश्व कोश– भाग–1, – पृ0 356
2. कमलकिशोर गोयनका– प्रेमचन्द विश्व कोश– भाग–2, – पृ0 214
3. शिवरानीदेवी प्रेमचन्द– प्रेमचन्द घर में–पृ0 74
4. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना–क्षितिज के पार 1959–पृ0 171

प्रेमचन्द का जीवन भी एक प्रकार से बड़ा ही रहस्य छिपाये हुए है। मद्यपान करने वाले व्यक्तियों का चेतन मस्तिष्क अधिकतर उनकी मद्यपान–अवस्था में अकर्मण्य हो जाता है और अवचेतन मस्तिष्क में विचारों की उधेडबुन लगी रहती है इसी अवस्था मे जो उसके मस्तिष्क के विचार होते हैं, वे भी स्वाभाविक रूप में प्रकट हो जाते हैं।[1] इसी कारण से प्रेमचन्द ने दलित–हरिजन समाज को अपनी कलम के द्वारा इतना समाज में गिराया कि वो आज तक न सम्भल सका है। अर्थात जब प्रेमचन्द नशे मे लिख रहे होंगे तो उनकी कलम के नीचे दबे–कुचले ही मानव–समाज के यही लोग आते रहे हैं। यह बात बिल्कुल सिद्ध रूप से कही जा रही है। जो पीता है वो पीलाता भी है। चाहे ज़मींदारो का समय हो, चाहे गरीब समाज की बरियाया हो मगर हम पीकर लिख रहे है तो पिलाकर समाज के सामने उनको अपनी कलम की मार से प्रस्तुत भी तो कर रहे हैं। यद्यपि प्रेमचन्द ने अछूतों के जीवन की उन सारी दुर्बलताओं पर भी प्रकाश डाला है जिनके कारण स्वर्ण हिन्दू उन्हें हीन एवं तुच्छ समझते है।[2] अछूतो में प्रायः शराब पीने का कुव्यवसन होता है जिसके कारण उनके परिवार को तो अनेक कष्ट सहने ही पड़ते हैं, अन्य जातियां भी उन्हें नीच समझती हैं। इस प्रकार प्रेमचन्द ने अछूतों के जीवन की दुर्बलताओं का तो चित्रण लिखकर प्रस्तुत किया है। मगर उच्च जातियों को ऊंच–नींच के झूठे दम्भ से मुक्ति दिलवाना जितना आवश्यक है, उतना ही जरूरी है अछूतों (हरिजनों) के जीवन की उन दुर्बलताओ को दूर करना जिनके कारण उच्च जातियां उन्हें गिरी दृष्टि से देखती है। इस सन्दर्भ में प्रेमचन्द ने यह भी स्पष्ट कर दिया है कि अछूतों के प्रति सच्चा–सेवा भाव रखने वाला मेरे अलावा और ही व्यक्ति उनके हृदय पर अपना प्रभाव डाल सका है। जैसा कि उनकी 'मन्त्र' कहानी के पन्डित लीलाधर चौबे जो ब्राह्मण ऊंच जाति के हैं वो अपने उपदेशक के रूप में अछूतों

1 डा0 राधेश्याम गुप्त– प्रेमचन्दोत्तर कहानी साहित्य–पृ0 83
2 डा0 रक्षापुरी–प्रेमचन्द साहित्य मे व्यक्ति और समाज–पृ0 227

के हृदय पर अपना प्रभाव नहीं डाल पाते लेकिन अछूतों के बीच में रहकर उनके हृदय को अपनी सेवा द्वारा जीत लेते हैं।[1] प्रेमचन्द के कुछ आलोचक या विरोधियों ने उन पर यह आरोप लगाया था कि वे (प्रेमचन्द) ब्राह्मण–विरोधी हैं और ब्राह्मणों के विरूद्ध घृणा का प्रचार कर रहे हैं।[2] इस प्रकार से बात स्पष्ट हो जाती है कि प्रेमचन्द ने ब्राह्मणों को एक प्रकार से अपनी कलम के इशारे से उपदेश के अलावा दलित (हरिजनों) में पन्डित लीलाधर चौबे जी को उन लोगों के बीच में रहता दिखाकर अपने मानसिक अन्तर्द्वन्द्व की भावना को तो सन्तुष्ट कर सके है। परन्तु कहीं पर अपने आपको पूरे हिन्दी साहित्य में चमारों (जाटवों–दलितों–हरिजन) के बीच में बैठा हुआ या भोजन की स्थिति में नजर नहीं दिखलायी पड़ सके है। उसका एक ही कारण रहा होगा कि प्रेमचन्द के माता–पिता सर्वहारा वर्ग के नहीं थे, परन्तु वह मध्यवित्त समाज के भी उस तल को छूते थे जो जरा सी जोट पाते ही अपना वर्ग खोकर सर्वहारा बन जाता है। प्रेमचन्द ने जीवन भर इस वर्ग में ऊपर उठने की कोशिश की, परन्तु वह अधिक सफल हुए ऐसा कहना सम्भव नहीं है।[3]

जिस राह पर से दो चरण गुजर जाते हैं, उस राह के वृक्ष पर उन पग चिह्नों से एक कहानी लिखी जाती है। हर जीवित इन्सान के चेहरे पर एक कहानी लिखी रहती है। जो उसके चेहरे की झुरियों में, उसकी पलकों के निमेषों में और उसके माथे की सलवटों में पढ़ी जा सकती है।[4] मुंशी जी का जीवन इन्हीं परिस्थितियों की उनकी कहानियों में देखा जा सकता है। जिस प्रकार की आप कल्पना करते हैं उसी को अपने कलम से लिखकर कहानियों की रचना में पाठक का मनोरंजन और अपनी लोकप्रियता

---

1. प्रेमचन्द–मंत्र कहानी -मानसरोवर भाग–5- - पृ0 44
2. डा0 रक्षापुरी–प्रेमचन्द साहित्य में व्यक्ति और समाज–पृ0 213
3. डा0 रामरतन भटनागर - कलाकार प्रेमचन्द- पृ0 83
4. डा0 राधेश्याम गुप्त– प्रेमचन्दोत्तर कहानी साहित्य–पृ0 10

का ही प्रमुख उद्देश्य होता था।[1] किन्तु प्रेमचन्द जी का जीवन एक प्रकार से उनको बड़ा ही चचल जो एक स्थान पर निश्चित रूप में शान्त नहीं रहने दे सकता था। वह सदैव ही मंझधार की नाव की भांति अस्थिर रहते थे। इसका कारण है- मनुष्य किंकर्त्तव्य–विमूढता। जो सदैव एक निश्चय पर स्थिर रहना उसकी शक्ति के बाहर की वस्तु है। जिधर की शक्तियां उसे अपनी ओर आकर्षित कर लेती है, उनका मन उधर ही को गतिमान होता रहा है। इस प्रकार उनके जीवन को डांवाडोल या अस्थिर–चित्तता के कारण मुंशी जी को अन्त में पश्चाताप करना उनकी अपनी बेबसी अर्थात कमजोरी ही कह सकते हैं।

जिस मानव में दुःख की भावना ज्यों–ज्यो बढ़ती जाती है, त्यों–त्यों उसमे क्रोध की भावना तीव्रतर होती है। इसी प्रकार के क्रोध के वशीभूत ही वह दुष्कर्म में प्रवृत्त हो जाते हैं। उसकी विचार श्रृंखला विचलित एवं विभ्रमित हो पूर्णतया विकृत हो जाती है। मस्तिष्क में व्यर्थ की बातें चक्कर लगाया करती है।[2] यदि मनुष्य का समस्त जीवन दुःखमय हो और स्वप्न में उसे सुख की आशा बंधाई जायें तो भी वह उसे कभी भी स्वीकार करने को तत्पर नहीं होगा। उसका विश्वास दृढ़ हो जाता है कि जिस सुखमय जीवन का स्वरूप अभी प्रदर्शित किया जा रहा है, वह क्षणिक है। क्योंकि जब कोई मनुष्य गरीब हो या अमीर वो नशे की हालत में होता है तो वो अपने को सम्पन्न स्थिति का बोध उसमें स्वयं उत्पन्न होने लगता है। नशा कहानी उदाहरण है जिसमे एक साधारण परिवार का युवक एक सम्पन्न परिवार में पहुंच जाने पर पर किस प्रकार व्यवहार करता है नायक गरीब 'वीर' जमींदारों की खूब निन्दा करता है। क्योकि उसकी दशा इतनी अच्छी नहीं है। जो सम्पन्न समाज में एक उच्च स्थान ग्रहण कर सकें परन्तु उसके सहपाठी अमीर नायक ईश्वरी ने उसे अपने घर ले जाकर कुछ दिनों वहां

1. डा0 राधेश्याम गुप्त– प्रेमचन्दोत्तर कहानी साहित्य–पृ0 37
2. विनोदशंकर व्यास– दीपदान– प्रथम सस्करण, 2017 वि0–पृ0 151

रखा। 'वीर' की वहां के वातावरण के अनुसार उसकी आदतों में परिवर्तन आना स्वाभाविक सा बन गया था। ईश्वरी की देखा–देखी वह वीर भी उनके नौकरो से काम लेता था और शासन करता और अक्सर उन्हें डांटता–फटकारता था। अपने दोस्त ईश्वरी के साथ गांव में रहते हुए वह अमीरों का सा जीवन व्यतीत करने लगा था। अब वह शान–शौकत ईश्वरी से बढ़कर बरतने लगा। अपनी पुरानी स्थिति की सारी बातें भूल सा गया। यह एक प्रकार का ज़मींदारी का ही नशा कह सकते है। जो स्वप्न के रूप में क्षणिक हो जाया करता है। यही स्थिति मुंशी प्रेमचन्द के जीवन की एक कहानी का रूप भी है। वो नशे की दशा में जब बेदार के घर इलाहाबाद में थे तो वो अपने आपको एक बहुत बडा कलम का सिपाही समझ रहे थे। जिसकी जो बाते चाहे लिख दे। मगर हमारे ऊपर उसका कोई प्रभाव पडने वाला नहीं है। मगर जब वे अपने घर रात को वापस लौटे तो बच्चों को देखकर कुत्तों की तरह डांटने लगे। उनके (प्रेमचन्द) डांटने की आवाज मेरे (शिवरानी देवी) कानों में आयी। मैंने (शिवरानीदेवी) पूछा– बेटी, कुत्ता (प्रेमचन्द) किधर से आ गया बेटी बोली–तुम न जाओं। बाबू जी (प्रेमचन्द) शराब पीये हुए है। तुम्हें भी डांटेंगे। मैं (शिवरानीदेवी) बोली – यह नया नशा सीखा?[1] इस प्रकार से प्रेमचन्द को भी अपनी कलम का नशा था। प्रेमचन्द को दो प्रकार का नशा था। एक कायस्थ बुद्धि–कलम का नशा। जिसको चाहे वे हरिजन से पीटवा दे या उसका धर्म अपनी कलम की मार से भ्रष्ट कर दे। या चमारों–जाटवों की हीन दशा को जितना चाहे कम या ज्यादा कर दे। यह उनके मन की अन्तर्द्वन्द्व भावना की बात थी। दूसरा नशा जो शराब का था। उसको पीकर वो अपना समय भी भूल जाते है। अर्थात घर की खबर न रखकर चाहे जब घर आये। इस प्रकार के वातावरण से उनके परिवार पर क्या असर पड़ेगा। जिस घर का स्वामी बुरी आदतों का शिकार हो, वो किस

1. शिवरानीदेवी प्रेमचन्द– प्रेमचन्द घर में–पृ0 75

प्रकार से अपने घर को स्वस्थ बनाकर रख सकता है। एक न एक दिन तो उसके घर के लोग भी शराबी बन सकते हैं। अक्सर देखने में भी आता रहता है। प्रेमचन्द ने दूसरे वर्ग समाज को तो शराब पीने की वजह से एक प्रकार की कुप्रवृत्तियां एवं सामाजिक तथा व्यक्तिगत हानि पहुंचाने वाली आदतें पड़ जाती है, जिनसे व्यक्ति, समाज तथा देश तीनों को क्षति पहुंचती है। सूरदास प्रेमचन्द जी के ही मन की बात को कहता है – मुहल्ले की रौनक जरूर बढ जायेगी, रोजगारी का लोगों को फायदा भी खूब होगा। लेकिन जहां रौनक बढ़ेगी, वहां ताड़ी–शराब का भी तो प्रचार बढ जायेगा। हमारे मुहल्ले में किसी ने औरतों को नहीं छेड़ा था, न कभी इतनी चोरियां हुई थी, न कभी इतने धड़ल्ले से जुआ हुआ, न शराबियों का ऐसा हुल्लड रहा। रात को इतना हुल्लड़ होता है कि नींद नहीं आती। किसी को समझाओं, तो लड़ने पर उतारू हो जाता है।[1] यह सारी बुरी आदतें केवल दलित समाज के ही लोगों में प्रेमचन्द ने अपने साहित्य के माध्यम से लिखी है। जिनमें दलित समाज के ही अधिकतर पात्र पाये जा सकते हैं। अर्थात जो अच्छे कार्य करता है वो उच्च कुल जाति का माना जा सकता है और जो बुरे कार्य करे वो शूद्र या हरिजन दलित समाज का माना जायेगा। ऐसी धारणा प्रेमचन्द के साहित्य में देखने को मिलती है। अर्थात मनुष्य के शरीर में स्वच्छ हृदय हो तो वो साफ–सुथरी ही बात को अपनी कलम से लिखकर समाज के सामने प्रस्तुत करने में अपना गौरव समझ सकता है। परन्तु जिसका शारीरिक हृदय ही अपवित्र हो तो वो सही बात को लिखने में काइंयापन ही दिखायेगा। जो मनुष्य अपनी बुरी आदतें छिपाने के लिए दूसरों की बुराईयों को गिनाना एक तरह से आसान सा बन गया है। अर्थात प्रेमचन्द शराबी होकर किस प्रकार से स्वयं को बेगुनाह साबित कर सकते हैं? अगर अच्छा लेखक बुरी आदतों वाला होगा तो वो अपनी बुरी आदतों पर पर्दा डालकर

---

1. डा0 रामरतन भटनागर–कलाकार प्रेमचन्द–पृ0 80

असहाय या दलित–पिछड़ों पर ही उस युग में कलम का कमाल दिखाकर इस संसार से चले गये थे। अगर आज का युग होता तो दलितों–पिछड़ों की हाथ की उंगलियों की कलम का कमाल अपनी जिन्दगी में जीता जागता तमाशा देखने को मिलता काश उन्होंने दलितों–हरिजनों की हीन दशा का ही लाभ उठाकर अपनी जिन्दगी की रोटियों का सहारा ही बनाया था। लेकिन जो सपना अपनी जिन्दगी में सजोये बैठे थे, वो एक प्रकार से महल का खन्डर हो गया था। प्रेमचन्द ने लिखा है कि उनका जीवन बहुत कुछ समतल–जैसा रहा है। उसमें न पहाड़ है न घाटियां। सारे जीवन भर वह एक दूसरे की उधेडबुन में संघर्ष ही करते रहे। रोटी ने रोमान्स के लिए अवकाश ही नही छोड़ा।[1]

प्रेमचन्द की कला को समझने के लिए उनके इस समझौते को समझना होगा। इस समझौते की प्रेमचन्द जी ने एक वाक्य में इस प्रकार उपस्थिति किया है – साहित्य की आत्मा आदर्श है और उसकी देह यथार्थ चित्रण। प्रेमचन्द की सारी रचनाओं में जीवन का यथातथ्य रूप ही उपस्थित किया गया है, परन्तु अन्त में सद्वृत्तियों और सदाशयों की अर्थात अच्छे चालचलनों या अच्छा व्यवहार करने वाले अच्छे या भले मानस–सज्जन की ही विजय होती है और आदर्श परीक्षा की अग्नि में तप कर खरा निकलता है। यह समझौता उनकी अपनी सूझ है। वह (प्रेमचन्द) कहां तक कला की रक्षा कर सके हैं, यह दूसरी बात है।[2] लेकिन साहित्य तो मनुष्य के सामने जवाब देह है। इसके लिए कानून है, जिनसे इधर–उधर नहीं हो सकता उसकी विशाल आत्मा अपने देश बन्धुओं के कष्टों से विफल हो जाती है और उस तीव्र विकलता में वह रो उठता है।[3] इस प्रकार नशा कहानी का जो पूरा निचौड सामने

1. डा0कृष्णचन्द पाण्डेय– प्रेमचन्द के जीवन दर्शन के विधायक तत्व पृ0 230
2. डा0रामरतन भटनागर– कलाकार प्रेमचन्द पृ0 139
3. डा0रामरतन भटनागर कलाकार प्रेमचन्द–पृ0 132

आया है। वो एक प्रकार से आदमी को स्वयं अपने जीवन के बारे में सोचकर ही दूसरे पर कीचड उछाला जाना सम्भव हो सकता है।

इस प्रकार से इस 'नशा' कहानी का अन्त उसकी आखिरी मंजिल मौत ही उसके जीवन के सारे नशे को एक क्षण में उतार देती है। फिर वो किसी की बुरी और अच्छी लिख या सुन भी नही सकेगा।